हज़रत इमाम हुसैन[अ०] की जवीन कल्पना उनके विशवास और जिहाद के प्रकाश में

प्रोफ़ेसर डॉ० मौलाना शबीहुल हसन नोनहरवी

1— यह शीर्षक वास्तव में स्वयं हज़रत इमाम हुसैन (अ0) की एक सूक्ति से लिया गया है जिसकी चर्चा और अनुहार बहुत से नये और पुराने संदर्भ ग्रन्थों में विद्यमान है, '' जीवन तो बस विशवास और जिहाद का नाम है'' यह जानकारी नहीं है कि इस सूक्ति का प्रसंग क्या है? परन्तु यह सूक्ति निश्चय ही एक ऐसी शाश्वत सच्चाई पर सम्मिलित है जो परिवर्तनीय अवसरों और इतिहास के बदलते रंग—ढंग से कहीं ऊंची है और यही उसकी उच्चतर एवं सार्वभौमिक सत्यता का प्रमाण है। यह सूक्ति मात्र जीवन, विश्वास और जिहाद के परस्पर सम्बन्ध का ही रेखांकन नहीं करती बल्कि अपनी अर्थ सम्बन्धी लपेट के कारण करबला सरीखी दूरगामी घटना और उसके अनन्त आयु सन्देश का शीर्षक बनने की क्षमता भी रखती है। इसलिए कि इसका सम्बन्ध वर्तमान युग की परिस्थितियों से वैसा ही है जैसा कि भूतकाल की परिस्थितियों से था।

2— जीवन और उसके अभिप्राय व सार्थकता व यथार्थ के सम्बन्ध में चिन्तन—मनन का क्रम उतना ही पुराना है जितना स्वयं नियमित रूप से जीवन। परन्तु यह भी ठीक ही है कि हज़ारों—हज़ार वर्ष तक विचारधाराओं ओर चिन्तनों की धूल उड़ाने के पश्चात् भी कष्ट व खोज अभी तक अधकचरे और असफल ही है और जीवन वैसा ही पहेली सरीखा अब भी है कि जैसे था। छोटे—छोटे सिलसिलों और अनुपूरक विचारधाराओं को छोड़ के यदि जीवन के विषय में उपलब्ध ऐतिहासिक स्मरण अभिलेखों को विभिन्न भागों में बांटा जाय तो दो प्रकार के स्पष्ट और परस्पर विरोधी स्कूल उभर कर सामने आयेंगे। एक ''धार्मिक और दैवी'', दूसरा ''भौतिक और धर्म निरपेक्ष''। आज की बात नहीं बल्कि इंसान के स्मरण काल से भी बहुत पहले जीवन की धर्म निरपेक्ष कल्पना विद्यमान थी। लेकिन यह कल्पना जो अस्तित्व—मूल और यथार्थ की दृष्टि से धनात्मक होने के स्थान पर ऋणात्मक है, जीवन के लिए वास्तविक उद्देश्यों के निर्धारण से सदैव असमर्थ रहा है और यदि कभी बुद्धि की व्याकुलता और सामाजिक आवश्यकताओं के कारण इस चिन्तन धारा को कुछ उद्देश्यों के रचने का अवसर मिला भी तो वह किसी अपवाद के बिना क्षणिक, ऋणात्मक और मूल्यों की वास्तविक सच्चाई से सूने रहे हैं। ऊंचे—ऊंचे दअ्वों के होते हुए भी धर्म निरपेक्षता समस्या का वास्तविक सुलझावा कभी सिद्ध नहीं हुई। वह एक प्रकार की टाल मटोल है। उसे कर्बला की घटना को समझने के क्रम में कोई सचमुच की महत्ता देना सिद्धान्ततः सम्भव ही नहीं। अगर धर्म—निरपेक्ष जीवन कल्पना रखने वाले लोग कर्बला की घटना या हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के आचरण—शुभ से कोई यश और शक्ति पा लें तो यह अपनी जगह पर सम्भव है। परन्तु इससे धर्म—निरपेक्ष दृष्टिकोण को विशवसनीयता का प्रमाण उपलब्ध नहीं हो सकता बल्कि दैवी वरदानों और उनसे बेरोक—टोक लाभान्वित होने की छूट की तरह कर्बला की घटना की व्यापक आदर्शवादिता, उच्चकोटि की सार्वभौमिकता और उसके एक सामान्या पौशाला होने की विशेषता अवश्य खुल जाती है। मगर जीवन की यह अविश्वसनीय कल्पना जो अपने विभिन्न रूपों व वर्गो में मौलिक रूप से धर्म निरपेक्षता का सहारा लेते हुए किसी न किसी

प्रकार के विश्वास और उसके लिए किसी न किसी प्रकार के जिहाद की आवशयकता सदैव अनुभव करती रही है।

3— सभी बड़े असत्यवादियों के पास भी कोई न कोई विश्वास था और उसके लिए उन्होंने कभी—कभी तो प्राण को विचलित कर देने वाले युद्ध किये है। जिससे यह प्रमाणित होता है कि धर्म—निरपेक्ष परिकल्पना भी विश्वास और धर्मयुद्ध के बिना नहीं चल सकती, तो जीवन की धार्मिक और ईश्वरीय कल्पना जिसकी स्थापना उच्चकोटि के उद्दश्यों पर है विश्वास एवं जिहाद के बिना क्यों कर पूरी और व्यवहारिक हो सकती है?

4— हज़रत इमाम हुसैन (अ0) की जीवन—कल्पना या जिस जीवन का वह प्रतिनिधित्व कर रहे थे उसकी रूप रेखायें इतनी सुस्पष्ट है कि जिसके प्रवेक्षण और अध्ययन में, देखने में तो कोई कठिनाई नहीं है

परन्तु जीवन की जिस परिकल्पना ने ऐसे आत्मसन्तोष और ऐसी निडरता के साथ ''आशूर'' अर्थात ''दसवीं मुहर्रम '', के दिन व्यवहारिक आकार ग्रहण किया हो उससे कोई सुविज्ञ व्यक्ति असावधान नहीं रह सकता। उनकी जीवन कल्पना तक पहुंचना इसलिये भी अपेक्षतया सहज है कि यह कल्पना उनकी स्वरचित या निजी और व्यक्तिगत पूंजी न थी। **यह कुरआन की दी हुई वही कल्पना थी जिसकी हज़रत पैगम्बर (स0) व्याख्या, भाष्य करते रहे।** उसके विश्वास और उसक लये जिहाद का आकार—प्रकार, इस कल्पना के साथ वास्तविक एवं आदर्श साम्य रखता था। इसलिए हुसैनी जीवन कल्पना के विषय में कुरआन ही से लौ लगाना श्रेष्ठकर ही नहीं अपितु एक मात्र और उपयुक्त कार्य पद्धति होगी। कुरआन ने जीवन और उसकी सार्थकता के विषय में कुल मिला—जुला कर बड़े विस्तार और बड़ी पुनरावृत्ति के साथ मानव जाति को सचेत किया है और '' सोद्दश्येयता एवं ''निरूद्दश्येयता'' के बीच विशाल खाड़ी, और निरूद्दश्येयता के डरावने परिणामों की ओर बार—बार ध्यान दिलाया है। इस चेतावनी का प्रारम्भ सृष्टि के उस विवरण से होता है, जिसका वर्णन कुर्आन मजीद में बहुत आया है।

''क्या तुमने यह समझ रखा है कि हमने अनायास ही तुम्हारी सृष्टि कर दी है और तुम हमारी ओर पलटाये नहीं जाओगे?''

इस पावन आयत से न केवल यह स्पष्ट हो जाता है कि सृष्टि और जीवन व्यर्थ नहीं है बल्कि सोद्देश्य है और इस उद्देश्य की पूर्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि परलोक और परमेश्वर की ओर पलटने की कल्पना जीवन के साथ सम्मिलित न हो। निरूद्देश्य एवं सोद्देश्य जीवन का वास्तविक भेद ही यही है कि निरूद्देश्य जीवन में **ईश्वर की ओर पलटने की कल्पना ही व्यर्थ** हो जाती है और सोद्देश्य जीवन में ईश्वर की ओर पलटना जीवन का परिशिष्ट ही नहीं अपितु जीवन के तत्व में सम्मिलित है— **''परलोक ही अस्ल जीवन है''**

यह और इसी प्रकार की बहुत सी आयतें हैं जो सृष्टि और जीवन के अभिप्राय एवं सत्मार्ग का निर्धारण करती है जिनसे अनुमान होता है कि जीवन—मरण ईश्वरीय सृष्टि के दो परस्पर सम्बद्ध अंग है और परलोक की कल्पना इह लोक की कल्पना का वास्तविक उद्देश्य और परिणाम है किसी भी ईश्वरीय सन्देश एवं व्यवस्था में वास्तविक जीवन—मूल्य इसी जुड़वां कल्पना से जन्म लेता है। इस बात पर बल देने आवश्यकता इसलिए उपस्थित नहीं हुई कि इमाम हुसैन (अ0) की जीवन कल्पना और उनके जीवनदायी कदम के प्रत्येक अंश को परलोक की कल्पना से सम्बद्ध करने के पश्चात् ही ठीक परिणाम निकल सकते हैं। करबला के त्रासदी के सभी वृतान्त लेखकों ने इस बात का अनुहार किया है कि **''मदीने'' से निकलने के उपरान्त प्रायः सभी पड़ावों पर आपने मृत्यु को याद किया और बराबर हज़रत 'यहया' पैग़म्बर की चर्चा करते** रहे। मृत्यु की चर्चा न किसी डर के

कारण थी और न किसी आन्तरिक दुविधा के कारण अपितु जीवन कल्पना के द्वितीय और अनिवार्य अंग के स्पष्टीकरण के लिए थी।

5— सृष्टि और जीवन के विषय में कुरआनी दृष्टिकोण का एक अविस्तृत रेखाचित्र और प्रारम्भिक रूप रेखायें ऊपर लिखी पंक्तियों से किसी सीमा तक प्रकट होती है। परन्तु विषय और प्रश्न को हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के इर्शाद और फिर करबला की घटनाओं से जोड़ने हेतु जिस राजपथ की आवश्यकता है उसके इनारे किनारे और महत्तव पूर्ण मार्गशिला की चर्चा भी आवश्यक है। यद्यपि मानव सृष्टि कोई व्यर्थ कार्य नहीं लेकिन यह स्पष्ट रहना चाहिये कि मनुष्य कोई अलग–थलग अस्तित्व नहीं रखता है। वह ब्रह्मण्डलीय वातावरण में जीवन विताता हैं उसका प्रसंग सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड हैं और वह समाज है जिसकी वह संरचना करता है, जिससे वह प्रभाव ग्रहण भी करता है और जिस पर वह प्रभावी भी होता है। मानव जीवन का कोई उद्देश्य न तो पूर्णता को प्राप्त हो सकता है और न ही फलित हो सकता है यदि संसार की सृष्टि निरूद्देश्य है। समाज बेतुके और बिखरे हुए अंशों का निर्रथक संग्रह है तो उन दोनों के मध्य मनुष्य की सोद्देश्य सृष्टि भी आशाप्रद परिणाम कदापि नहीं उत्पन्न कर सकती। इसी लिये कुरआन चिन्तन–मनन का बुलावा देता है और बार–बार यह घोषणा करता है कि ब्रह्माण्ड, धरती और आकाश की सृष्टि भी व्यर्थ और निरर्थक नहीं है—

"हमने आकाश और धरती को और जो कुछ उनके बीच है निर्रथक (और व्यर्थ) नहीं पैदा किया है।"

यहीं से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि अगर आकाश और धरती में असत्य सर उठाये तो उसका मिटा देना न केवल संसार सृष्टि के स्वाभाविक तक़ाज़ों के अनुरूप होगा बल्कि स्वयं मानव सृष्टि की पूर्ति के लिए आवश्यक होगा। ब्रह्माण्ड की सृष्टि तो भूमिका स्वरूप उद्देश्य रखती है। **मूल उद्देश्य तो मानव सृष्टि से प्रारम्भ होता है और पंथ के गठने पर पूरा होता है।** इसीलिए ब्रह्माण्ड अपने सारे सौन्दर्य और प्रताप के होते हुए बस एक सृष्टि की हुई वस्तु है। परन्तु मनुष्य को—"अच्छे से अच्छे हाल (और सन्तुलन) के साथ रचा गया है।"

खुली बात है कि इसका तात्पर्य केवल उसकी व्यक्तिगत सजावट, शारीरिक सौन्दर्य या भौतिक बल नहीं है बल्कि उसका सृजन और सृजन की उस उपयुक्ता से भी तात्पर्य होगा जिसके वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड और उसके प्रतीकों के साथ उद्देश्यपूर्ण एकता और साम्य बनाये रखने में सक्षम बने। यह बात तब तक असम्भव है जब तक कि ब्रह्माण्ड और मानव के उद्देश्यों का उदय एक ही दिशा से न हुआ हो। इन सामूहिक उद्देश्यों का प्रारम्भिक बिन्दु "तौहीद (एकेश्वरवाद) के अतिरिक्त कोई अन्य वस्तु नहीं हैं **उद्देश्यों की आवश्यकता एकता जो ब्रह्माण्ड, व्यक्ति और समाज को जोड़ेगी तौहीद के आधार पर** ही सम्भव है। मनुष्य पर इसका उत्तरदायित्व है, विशेषकर इस कारण भी कि इन्द्रलोक में अकेले ईश्वर के प्रतिनिधित्व का पद भार उसे संभालना है ताकि वह अपनी व्यक्तिगत और ब्रह्माण्डीय लय को सदैव ठीक रखे और कुल मिला–जुलाकर ऐसे चलन और शैली का पाबंद रहे जो ब्रह्माण्डीय सन्तुलन को बिगाड़ने का कारण न बने। उसके व्यक्तित्व में क्षमताओं की रंगा–रंगी हैं वह वास्तव में छहों दिशाओं में बटा हुआ है फिर भी उसे अपने आचरण में सच्चे एके या तौहीदी तक़ाज़ों का भरपूर प्रतिनिधि होना चाहिए। आवश्यक मस्लहतों के कारण उसे अनेकता में उलझा दिया गया है। मगर इससे भी महत्तवपूर्ण मस्लहत के आधार पर तौहीदी सूत्र से सम्बद्ध करके उसके प्रतीकात्मक मार्ग अर्थात सिराते मुस्तकीम (सत्मार्ग) पर चलते रहने में उसकी पूरी मदद भी की गयी है।

"क्या हमने मनुष्य को दो आंखें, एक जिह्म और दो अधर नहीं दिये हैं।"

परन्तु साथ ही साथ यह भी कहा है—

"खुदा ने किसी व्यक्ति के लिये भी उसके सीने में दो हृदय नहीं बनाये हैं।"

वह अपनी इन्द्रियों के सहयोग से सार्वभौम में यायावर और वाणी पहचानने वाला रहेगा। मगर उद्देश्य की एकता की पूर्ति और उसके बने रहने के लिए उसके पास बोध एवं ज्ञान का केन्द्र एक ही मन और चर्चा एवं अभिव्यक्ति के लिये एक ही जिह्म दी गयी है ताकि वह एकाग्र मन से अपने जीवन उद्देश्यों की पूर्ति में व्यस्त रह सके और जिस प्रकार वह सोचे समझे उसी प्रकार बोल भी सके।

6– इस विस्तार से यह बात और अधिक सपष्टीकरण की मुहताज नहीं रहती कि संसार–सृष्टि और मानव की रचना से सम्बन्धित समस्त व्यवस्थायें एक प्रकार, आकृति या फार्म से सम्बन्धित है।। इसके पश्चात् स्वाभाविक रूप से जिज्ञासा का दूसरा चरण यह उभरता है कि **इस वस्तु और सार्थकता की वास्तविकता और स्थिति क्या है जिसकी सम्भावनाओं को व्यवहारिक रूप देने के लिए और मानव एवं ब्रह्माण्ड की सजावट, शक्ति और कार्य–कुशलता को बढ़ावा देने हेतु इतनी प्रबल व्यवस्था की गयी है।** इसके लिये मानवीय ब्रह्ममाण्डीय सृजन की आधार शिला एक ही प्रकृति पर रखी गयी जिसके बारे में समस्त विस्तार से आंखें मूंद कर बस इतना कह देना है कि उसके अर्थ,
उद्देश्य और अभिप्राय के स्पष्टीकरण हेतु उसे दैवी प्रकृति **(फितरतुल्लाह)** का नाम दिया गया है इस प्रकृति से तात्पर्य वह साधारण श्रेणी की प्रकृति नहीं है जो हज़ारों वर्ष से विज्ञान, दर्शन और काव्य के बे लगाम बे रकाब घोड़े की दौड़ का मैदान रही है बल्कि सृष्टि के साथ प्रतिष्ठित होने वाला वह उद्देश्य पालक एवं उद्देश्य–जनक सत् है जो न केवल मनुष्य अपितु पूरे ब्रह्माण्ड को गतिमान बनाये रहता है। इसी कारण फ़ितरत (प्रकृति) का शब्द कुर्आन केवल मनुष्य के लिए नहीं बल्कि सृष्टि–सृजन के विषय में भी बराबर प्रयोग करता है।

"तुम्हारा पालने वाला वहीं है जो आकाशों एवं धरती का पालने वाला है जिन्हें उसने एक विशेष प्रकृति पर ढाला है।"

"कौन हमें (परलोक की तरफ़) पलटायेगा? कह दो वही जिस ने पहले पहल तुम्हें प्रकृति के अनुरूप ढाला। "

पैगम्बर नूह का कहना है कि–

"हे जाति वालो! मैं तुमसे किसी प्रतिकर का इच्छुक नहीं हूं मेरा प्रतिफल तो उस के ज़िम्मे है जिसने मेरी प्रकृति ढाली है।"

"और मैं उस की उपासना क्यों न करू जिस ने मेरी प्रकृति बनायी है और उसी की ओर तुम सब पलटाय जाओगे।"

इस के अतिरिक्त 'फ़ितरतुल्लाह' की महत्ता इतनी है कि **"अल फ़ातिर" (प्रकृति का रचयिता के नाम से कु़रआन में एक पूरा सूरा अवतरित किया** गया है। यह और इसी तरह की बहुत सी आयतें फ़ितरतुल्लाह और उसके कार्यक्षेत्र और सृजनात्मक महत्ता की ओर संकेत करती हैं इन आयतों का अभिप्राय यही है कि सृष्टि का मूल आधार एक प्रकृति है और चूंकि वह 'फ़ितरतुल्लाह' है इस लिए ब्रह्ममाण्ड और मनुष्य में अभिप्राय एवं क्रिया की दृष्टि से एक समान कार्यरत है। **वह एक इकाई है जो सृष्टि का सार है।** उसकी विशेष मांगों और तक़ाज़ों में यह बात सम्मिलित है कि परमेश्वर के अलावा सृष्टिलोक की किसी वस्तु या स्वयं मनुष्य की उपासना नहीं होगी। परलोक के पलटाव की ओर आकर्षण स्वाभाविक है और **प्रकृति के आदेशों के अनुपालन का प्रतिकर मांगना अप्रकृतिक है। केवल 'फ़ातिर' अर्थात प्रकृति का स्त्रष्टा ही उस का प्रतिफल दे सकता है** (अगर कोई पैग़म्बर ऊपरी तौर से देखने में कभी कोई प्रतिफल मांगे तो कोई ऐसी ही चीज़ हो सकती है जो प्रकृति का सार हो, तत्व हो) मतलब यह कि प्रकृति का शीर्षक तो तौहीद का विश्वास ही है परन्तु इसमें उपासना,

परलोक की ओर पलटना और दूसरे मूल सिद्धान्त एवं शाखायें सम्मिलित हैं और इसलिए अपनी सामूहिक कल्पना की दृष्टि से जिस प्रकृति को सृष्टि का आन्तरिक अंग बनाया गया है उसकी व्याख्या कुरआन ने ''दीने हनीफ़' और ''दीने क़ैयिम'' से की है।

''असत्य से दामन बचाकर अपना मुंह उसकी ओर सीधा करो यह दीन वहीं परमेश्वर की प्रकृति है जिस पर लोगों को पैदा किया गया है। परमेश्वर की सृष्टि में किसी बदलाव का प्रश्न नहीं। यही स्थाई और बना रहने वाला दीन है।''

इस आयत से यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि व्यवहारिक दृष्टिकोण से **''फ़ितरतुल्लाह'',''दीने हनीफ़''** और दीने क़ैयिम एक ही अभिप्राय को व्यक्त करने वाली विभिन्न व्याखयायें हैं और जिस प्रकार विस्तार एवं शाखाओं में रंगा–रंगी होते हुये भी प्रकृति का आधार बस ''एक होने'' पर है। उसी प्रकार ''दीने हनीफ़'' और दीने क़ैयिम'' की भी मूल निर्भरता ''तौहीद'' पर है और जिस तरह प्रकृति परलोक की ओर दिशा निर्देश करती है उसी तरह ''दीने क़ैयिम'' का कारवां परलोक के पड़ाव की ओर गतिमान है। प्रकृति को सृष्टि पर वर्चस्व नहीं दिया गया है और उस चीज़ को ''फ़ितरत'' का नाम भी नहीं दिया जा सकता जिसमें वर्चस्व और नाराज़ी का नाम–मात्र भी हो इसीलिए ''प्रकृति'' एक ऐसा क़रार है जिसकी पूर्ति हंसी–खुशी के साथ की जाती है। चूंकि 'प्रकृति' और 'दीने क़ैयिम' एक ही सिक्के के मानो दो पक्ष हैं इसलिए दीन के विश्वास और उनकी पूर्ति के लिए वक़्त पड़ने पर जिहाद भी नाखुशी और हिंसा पर लंबित न होगा अपितु प्रकृति के क़रार की पूर्ति होगा। यही दृष्टिकोण मौलिक रूप से खुदा की ओर से दीन पहुंचाने वालों का सदैव से रहा है। यही मौक़िफ़ सदा मोहम्मद (स0) व आले मोहम्मद (स0) ने चुना है और दीन के क़याम अर्थात धर्म स्थापना के क्रम में यही बात विशेषरूप से हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के भी दृष्टिगत थी। प्रकृति के इस क़रार जिसे दीने क़ैयिम के क़रार का नाम भी दिया जा सकता है, हमारे इमामों के कथन और हदीसों में बहुत से संकेत मौजूद हैं मगर इसका कोई नमूना मेरे दृष्टिगत नहीं है जो ''ज्ञान द्वार'' प्रकृति के अभिभावक अर्थात हज़रत अली (अ0) के इस कथन–शुभ से श्रेष्ठ और अधिक सर्वांगीण हो जो नहजुल बलाग़ा के दूसरे ही व्याख्यान में मौजूद है। पैग़म्बरों के भेजे जाने की चर्चा करते हुए फरमाते हैं कि खुदा ने लोगों के बीच लगातार पैग़म्बर भेजे–

''ताकि वह प्रकृति के क़रार को पूरा करने की मांग करें भुलाये हुए वरदानों को याद दिलायें और बुद्धि के ज़मीन में गाड़ दिये गये भण्डारों को खोद निकालें।''

स्पष्ट रूप से यह सारी कड़ियाँ एक श्रृंखला में ऐसी गुथी हुई हैं जो जीवन के वैचारिक और व्यावहारिक पक्ष के संतोष जनक हद तक स्पष्टीकरण के लिए पर्याप्त लगती हैं। इन्हें अगर सामने रखा जाये तो बड़े सहज रूप से समझ में आ सकता है कि **कर्बला का जिहाद किस जीवन–कल्पना और किस प्राकृतिक और धार्मिक क़रार की अदाई था और यह निर्णय करने में भी कोई कठिनाई न होगी कि यज़ीद की ओर से 'बैअत' अर्थात इस्लाम के विधिवत् शासक और प्रतिनिधि के रूप में मान्यता की मांग, जीवन अर्थात 'प्रकृति' यअनी 'दीने क़ैयिम' के क़रार के अनुरूप था।** यअ्नी कुल मिला–जुलाकर विश्वास के अनुरूप था अथवा हज़रत इमाम हुसैन (अ0) की ओर से 'बैअत' न करना फ़ितरतुल्लाह और तौहीद के तक़ाज़ों के पूर्णता अनुरूप था और इसीसे यह अनुमान भी लग सकता है कि हुज़ूर (स0) के स्वर्गवास के पश्चात् सन् 61 हि0 तक इस्लाम के इतिहास या इस्लामी समाज का विकास किस सीमा तक 'दीने फ़ितरत' (प्रकृति–धर्म) के क़रार के अनुरूप था और कितना उसके विरूद्ध?

7– हज़रत इमाम हुसैन (अ0) की

जीवन–कल्पना जो वास्तव में क़ुरआन और इस्लाम के पैग़म्बर (स0) की जीवन कल्पना है, केवल ''जिहाद'', के विशेष ढंग के
आधार पर अद्वितीयता प्राप्त करती है। लेकिन यह अद्वितीयता भी उनकी अपनी व्यक्तिगत नहीं है उसकी संरचना में आपका परिवार शरीक हैं। ''हुसैनी जीवन–कल्पना' सारांश के रूप में सृजन और उसके उद्देश्यों से प्रारम्भ होती है। जिसमें एकेश्वरवाद ओर परलोक की ओर पलटने की कल्पना अनिवार्य रूप से सम्मिलित है। दूसरा क़दम 'फितरतुल्लह' अर्थात 'ईश्वरीय प्रकृति' का बोध है, जो एकता और परलोक की ओर पलटने की कल्पना के बिना निरर्थक है। प्रकृति की सम्भावनाओं और उनके आविर्भाव और उसकी सक्रियताओं को जारी रखने के लिए कुछ विश्वासों का योग आवश्यक है। यह विश्वास विस्तार अवस्था में ऊपर से देखने में अनेक होते हूए भी ''एकेश्वर वाद के विश्वास'' पर
आधारित हैं। **इसी चीज़ का नाम 'दीने क़ैयिम'** है अर्थात विश्वासों की वस्तुनिष्ठ अभिव्यक्ति हेतु एक ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता होती जो उनके लिए सर्वोपयुक्त विधा निश्चित करे यअ्नी विश्वासों के लिए एक **(OBJECTIVE CO-RELATIVE)** का होना आवश्यक है। **इसी चीज़ का नाम 'शरीअत'** है 'धर्म–
विधि' है। **जिसे अपने क़ारक श्रृंखलाा के समान आद्योपांत प्रकृति के अनुरूप होना चाहिये।** इसीलिए इस का नाम '**शरीअते सहला**' (सहज–धर्मविधि) रखा गया है। यह सारी व्यवस्था जो आधार भूत जीवन कल्पना से लेकर धर्म–विधि ा के विधायन तक फैली हुई ह व्यक्ति और समाज को बीच में लाये बिना अपूर्ण और अकल्पनीय है। इसलिए कि इस दूर दराज़ श्रृंखला का मौलिक केन्द्र और विषय वस्तु, व्यक्ति और समाज ही है। यही कल्पनायें एक उम्मत (पंथ) की दाग़ बेल डालेंगी जो अगर टेढ़ेपन से बचेगी तो 'ख़ैरे उम्मत' अथवा 'उम्मते वस्त' अर्थात सर्वश्रेष्ठ एवं संतुलित पंथ मानी जायेगी और यही व्यक्ति अगर अपनी प्रकृति की पराकाष्ठा पर बना रहे तो 'नबी' या 'इमाम' होकर पंथ का मार्गदर्शन करेगा और यही सारी श्रृंखला अपनी रंगारंगी, अनेक प्रकार की होने, ऊपरी अनेकता एवं दिशाओं और कर्तव्यों की अनेकानेक दिशाओं के होते हुए भी तौहीद के विश्वास में पिरोई होगी। इस प्रकार जीवन 'सृष्टि' है, 'प्रकृति' है, 'दीने क़ैयिम' हैं और 'शरीअते सहला या सहज धर्म विधि' है और अन्तोगत्वा **'सुरक्षात्मक जिहाद'** है। इसमें से किसी भी कड़ी को तोड़ दिया जाये तो सारी श्रृंखला छिन्न–भिन्न हो जायेगी और अगर इसी बात को संक्षिप्त स्प में कहना हो तो जीवन 'तौहीद का विश्वास' है और इसका मौलिक तक़ाज़ा इस विश्वास की सुरक्षा के लिए 'जिहाद' है। इस प्रकार हम इस शुभ–कथन तक पहुंच जाते हैं जिसे हज़रत इमाम हुसैन (अ0) ने फ़रमाया–

''जीवन बस विश्वास और जिहाद है।'' इस कथन–शुभ में यह बात ध्यान देने योग्य है कि जीवन को 'विश्वास' कहा गया है 'विश्वासों' नहीं। इसलिए कि यद्यपि विश्वास कई हैं और सबकी महत्ता भी है लेकिन सब विश्वासों का पलटाव एक ही विश्वास की ओर होता है और वह 'तौहीद का विश्वास' है। विस्तार अवस्था में जीवन बहुत फैल जाता है मगर अविस्तार अवस्था और सारभूतता में तौहीद पर लंबित है। **इसलिए एकेश्वरवाद जीवन है और अनेकेश्वरवाद मरण है।**

8– हुसैनी विचार धारा की दृष्टि से जीवन विश्वास और जिहाद है। उनकी जीवन–कल्पना से सम्बन्धित सारे सोच विचार के पश्चात् यह बात स्वतः स्पष्ट हो जाती है कि स्वयं उनका विश्वास या विश्वास–संग्रह क्या थे? इस क्रम में किसी विशेष अनुसंधान या लम्बे व्याख्यान की आवश्यकता नहीं है। वह कोई कम जाने–पहचाने व्यक्ति न थे। उनके आचरण एवं भूमिका का कोई भी पक्ष ऐसा न होगा जो इतिहास लेखन में न आ चुका हो, स्वय इस्लाम

के पैग़म्बर (स0) ने इमाम हसन (अ0) और इमाम हुसैन (अ0) के परिचय के सिलसिले में फुटकर मतभेदों की उपेक्षा करते हुए सर्वमान्य रूप से जो बातें फ़र्माई हैं वह ऐसे व्यक्तियों के लिए कदापि उपयुक्त नहीं मानी जा सकतीं कि जिनका भविष्य और अन्तिम परिणाम ठीक न होने वाला हे। स्वय उनके दार्शनिक कथन, दिग्दर्शक कृतियां और तपस्या एवं उपासना की संलग्नता, आत्मा–सम्मान और धर्म–सम्मान की क्लपना और **असम्मनित जीवन अपेक्षा ससम्मान–मृत्यु को वरीयता देने का विचार** और फिर उनके दोष रहित वंशजों की उनके चरित्र के विषय में अनवरत व्याख्यायें और उनके निकटतम लोगों और साथियों की उनके बारे में राय उन के विश्वासों एवं भूमिका पर प्रकाश डालने हेतु पर्याप्त है। उनके बुरे से बुरे शत्रु भी 'यज़ीद की बैअत से इन्कार' के अलावा उनका अन्य कोई 'दोष' रेखांकित नहीं कर सकते, और यह निर्णय मानवीय अंतरात्मा के हवाले है कि उनका यह क़दम **'दोष' था अथवा उनके उज्जवल जीवन का सब से महत्तपूर्ण कारनामा?** और ''दैवी–प्रसन्नता'' की उपलब्धि की राह में अनवरत प्रयत्न का सफल पराकाष्ठा बिन्दु?

9– हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के विश्वासों और आचरण में कुरआन और उनके कुल के चलन–अनुसार सब से ऊंचा स्थान और मौलिक महत्ता 'तौहीद' को प्राप्त थी। परन्तु यह नहीं सोचना चाहिये कि उनके यहां जीवन, प्रकृति और 'दीने क़ैयिम' के सिलसिले में द्वितीय और सिद्धान्तों एवं विश्वासों का स्पष्ट हस्तक्षेप न था। दूसरे विश्वासों से उनके संघर्ष के सीधे सम्पर्क की निशानदेही और प्रमाण के लिए रिवायतों और ऐतिहासिक घटनाओं के ढेर प्रस्तुत किये जा सकते हैं। **यद्यति 'तौहीद' उनकी हर कारगुज़ारी की आत्मा थी परन्तु** दूसरी घटनाओं को उनके आचरण और भूमिका से जो हरयिाली प्राप्त हुयी उसके लिये सुप्रसिद्ध 'ज़ियारते वारिसा' के कुछ टुकड़ों को उद्धत कर देना पर्याप्त है जो संक्षेप के बावजूद प्रत्येक विस्तार अपने भीतर समेटे हुए हैं:–

''मैं गवाही देता हूँ कि आपने नमाज़ स्थापित की, ज़कात अदा की, अच्छी बात का निर्देश किया और बुरी बात से रोका, यहाँ तक कि 'यक़ीन' अर्थात 'मृत्यु' आप तक पहुंच गयी''

यह सभी काम एकेश्वरवाद के विश्वास के बिना अन्जाम नहीं दिये जा सकते इन सभी कामों का सम्बन्ध मृत्यु से स्पष्ट है इसलिए कि अन्त में मृत्यु यअ्नी परलोक में पलटने की चर्चा मौजूद है। यह भी ध्यान में रहना चाहिये कि इस वाक्यांश में एक गवाही और **इस्लामी एवं नैतिक दृष्टिकोण से असत्य गवाही देना या गवाही का छिपाना महापाप** है और इसी बिंदु से स्वाभाविक रूप से ध्यान इस बात की ओर भी जाता है इस्लामी जगत और इतिहासकारों के बीच और विशेषरूप से उन लोगों के लिए जो यज़ीद की सफ़ाई देना इस्लाम की बहुत बड़ी सेवा मानते हैं, कोई व्यक्ति ऐसा भी उपलब्ध हो सकता है जो यही गवाही यज़ीद के लिए भी दे सके? रहा स्वयं यज़ीद की जीवन–कल्पना और विश्वासों का प्रश्न, तो उसके दुराचारों के निरन्तर प्रदर्शनों के अतिरिक्त स्वयं उसका अपना काव्य पर्याप्त है जिससे इस्लाम के ऐसे व्यापक और सर्वांगीण धर्म के विषय में उसकी इस्लाम–पूर्व प्रकृति और क़बीलावादी दृष्टीकोण का अनुमान होता है। वह कभी उन्माद की अवस्था में 'बद्र' की लड़ाई में (इस्लामी सेना द्वारा) वध होने वाले अपने पूर्वजों को पुकारता है और गर्व से बताता है कि, उसने हुसैन (अ0) की जान लेकर कैसा बदला चुकाया है और कभी कहता है कि, बनी हााशिम ने मुल्क से खिलवाड़ किया, न कभी कोई दैवी–संवाद आया और न कभी कोई 'वहि्य' अवतरित हुई।

10– विश्वासों में हुसैन (अ0) की जीवन–कल्पना के सकारात्मक कार्य संचालन के पश्चात आवश्यक है कि इस जीवन कल्पना का प्रभाव उनके जिहाद की सार्थकता और प्रबन्ध

सम्बन्ध युक्तियों पर भी स्पष्ट कर दिया जाये। उनका जिहाद इन सारे ब्योरों के मूलतया अनुरूप था जिनकी चर्चा ''प्रकृति–सृजन'', ''दीने क़ैयिम'' और विशेषतया तौहीद के सिलसिले में हो चुकी है। उन के जिहाद की मूल स्थापना 'तौहीद' के विश्वास पर है परन्तु उनके जिहाद की एक विशेष पृष्ट भूमि है जिस की थोड़ी चर्चा आवशयक है। यह पृष्ट भूमि अगर बहुत समेटी जाये तो कम से कम उस **पचास साल पर तो अवश्य ही फैली हुयी है जो हज़रत पैग़म्बर (स0) के स्वर्गवास और करबला की घटना के बीच में थे।** वर्ना यथार्थ तो यह है कि इसपस–मंज़र या पृष्ट भूमि में भलाई और बुराई की वह सारी खींचतान शामिल है जिसका प्रारम्भ हज़रत आदम के किस्से से हुआ था। लेकिन इन पचास वर्षों में भी घटनाओं ने जिस प्रकार जल्द–जल्द करवट बदली उसने विकार और परिवर्तन के सभी काल सम्बंधी अनुमानों को रद कर दिया। मानवीय भद्रता की नीव, जिनका कुरआन ने ''हमने इंसान को बुज़ुर्गी दी'' से उद्घोष किया था, ढह गयी। सृष्टि और धर्म के उद्देश्य विकृत कर दिये गये। ''फितरतुल्लाह'' पर पूर्ण इस्लाम की प्रकृति को राज करने की सामान्य अनुमति प्रदान कर दी गयी। जाहिली (इस्लाम पूर्व) के उद्देश्यों को नये श्रृंगार के साथ धर्म परायण का पद प्राप्त हो गया। हज़रत पैग़म्बर (स0) के युग का कोई व्यक्ति शायद इस बात की कल्पना भी न कर सकता हो कि **धर्म पर राजसी वर्चस्व इस प्रकार स्थापित हो जायेगा और विश्वास एवं उपासनायें रोज़गार माल में परिवर्तित हो** जायेंगी। कुरआन, पैग़म्बर (स0) की सुन्नत और शरीअत का नियमित प्रतिनिधित्व घिनावनी हाथ–बिक्री (बैअ़त) द्वारा यज़ीद के हाथ में भी आ सकता है! इन असाधारण परिवर्तनों और परस्पर विरोधों की व्याख्या इतिहास–दर्शन के साधारण इतिहासकारों के लिए औपचारिक और साधारण बातों की सहायता से शायद ही कभी सम्भव हो सके। कारण और प्रभाव की वह धरा व्यापी श्रृंखला जिस पर अधिकांश इतिहासकारों को संतोष करना होता है शायद ही इतनी बड़ी ध्वस्त कारी घटना की व्याख्या कर सके। इस युग के सारे विकृत परिवर्तन इतिहास–बोध के सामान्य क्षितिज से इतने परे हैं कि उन प्रकट–अप्रकट शक्तियों को पकड़ में लाना साधारण इतिहसकारों के लिए दुष्कर है कि जिन्होंने **इस्लाम के मूर्ति भंजक युग के उपरांत इतना शीघ्र यज़ीद सरीखा भयावह बुत गढ़ डाला जिससे लोहा लेने के बजाये उस युग के अनेक और प्रभाव सम्पन्न व्यक्तियों ने भी मस्लहत और अलग–अलग रहने के धर्म–व्यवस्था पर आधारित औचित्य ढूँढ के हरबार हथियार डाल देना और घर बैठे रहना अधिक उपयुक्त जाना।** सम्भव है उनमें ऐसे लोग भी हों जो वैचारिक दृष्टि से शुद्ध विश्वास रखते हों। अगर ऐसा हो तो भी शायद वह जीवन और धर्म की अधूरी कल्पना रखते होंगे इसलिए कि जीवन और धर्म केवल विश्वास का नाम नहीं है बल्कि अन्तरात्मा की उस शक्ति और संकल्प के उस पोढ़ेपन का नाम भी हे जो जिहाद की रणभूमि में मुस्लिम मर्द को बेझिझक उतार दे। हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के लिए 'जिहाद' उनकी रचनात्मक जीवन–कल्पना का महानतम स्तम्भ था और उन से इतिहास और धर्म दोनों ही का आग्रह था कि वह यज़ीदी बुत को तोड़कर मूर्तिभजन के नवीन युग का शुभारम्भ करें और एक ऐसी क्रान्ति का शिलान्यास कर दें जो रहते संसार तक उर्वरता की क्षमता रखती हो। उनकी क्रान्ति–कल्पना को समझने के लिए भी प्रत्येक वह व्याख्या अवैध है जो उन के इस यौगिक पंथ और कल्पना से एक रूपता न रखती हो जिसकी इस निबन्ध में चर्चा हुई है। **उनके मूर्तिभजन के पश्चात् भी यज़ीदवाद नाश नहीं हुवा उसी प्रकार कि जैसे शैतान नष्ट नहीं हुआ। आज भी यज़ीदवाद किसी न किसी रूप में अस्तित्व रखता है** मगर एक अखण्डित बुत की तरह नहीं। यज़ीदवाद को विकसित

करने वाले व्यक्ति उस के टूटे–फूटे टुकड़ों और बिखरे हुए अंगों से काम चला रहे हैं। इसके ठीक विपरीत हज़रत इमाम हुसैन (अ0) को उनके साथियों समेंत टुकड़े–टुकड़े कर दिया गया मगर यह मौलिक रूप में 'तौहीद' का यश है कि हुसैनवाद शुद्ध और अखण्डित रूप में अब भी अपनी भूमिका और सन्देश समेत विद्यमान है और पीड़ित वर्ग को पराजय भावना से बचा रहा है।

11– परिस्थितियों ने हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के सामने अत्यन्त महत्तपूर्ण मांगें रख दी थीं जिन की पूर्ति आप को उस वक़्त ईश्वरीय उद्देशयों के एकमात्र रक्षक की हैसीयत से और एक आदर्श मानव होने के आधार पर करना ही थी। आपने इस्लाम का जीवन उद्धार किया, धर्म का पुनरूत्थान **(RESURRECTION)** किया, उपेक्षित कर दिये जाने वाले या खोय हुए मूल्यों को पुनः प्राप्त किया और अंहिसा की साहायता से एसे मूल्यों की पूर्नस्थापना की जिनका प्रभाव अमिट बन गया। दीन और राजसी के सर्म्पक को तोड़कर न केवल धर्म को स्वतंत्रता दिलाया बल्कि उसके गुण **''क़ैयिम'' (stature, Perseverance)** को और भी सुदृढ़ता प्रदान की, और सारांश स्वरूप 'फ़ितरतुल्लाह' को, जो अस्तित्व का सार्थक आधार है वाह्रय एवं कृत्रिम दबाव से अपने को सुरक्षित रखने का बल दिया। इस प्रकार ऐसी नई परिस्थितियां सृजित कर दीं जिस में यह प्रकृति न केवल अपने लिए और अच्छी सुरक्षा में समक्ष हो गयी बल्कि अपनी व्यापक संभावनाओं से मानव–भाग्य को माला–माल करने योग्य भी हो गयी और इस प्रकार उनके जिहाद ने मनुष्य को सच्चे अर्थों में स्वतंत्रता प्रदान की, और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' जैसे मौलिक एवं स्वाभाविक अधिकारों को फिर से प्राप्त कर लिया।

12– हज़रत इमाम हुसैन (अ0) ने जीवन, प्रकृति, विश्वास, जिहाद और दीन में न केवल तौहीद के आधार पर एक संकलनात्मक और रचनात्मक सुन्दरता एवं स्थिति उत्पन्न कर दी थीं बल्कि अपनी श्रेष्ठतम व्यवहार कुशलता, संकल्पदृढ़ता और ईश्वर द्वारा नियत पथ–प्रदर्शक के आदर्श के बल के कारण उन्हें वैकल्पिक परिभाषायें बना दिया था और वह स्वतः अपने दृष्टिकोण और आचरण इन यथार्थों या मूल्यों का विकल्प अथवा दूसरा नाम बन गये थे। यद्यपि वह अपने आप में तौहीद न थे परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि तौहीद की अपरिहार्य शर्तों में से थे। दीन के साथ उन के विचार एवं चिन्तन और कर्म एवं व्यवहार का सम्पर्क इतना भरपूर था कि वह केवल धर्मात्मा होने के बजाये स्वयं धर्म बन गये थे। उन्होंने यज़ीदी बैअ़त नकार के 'लाइलाह' की मंज़िल प्रज्वलित की थी और धन्यवाद प्रकाशन के साथ सज्दे में शहादत स्वीकार करके 'इल् लल्लाह' की मंज़िल सर कर ली थी और इस तरह ला इलाह इल् लल्लाह' का प्राकृतिक क़रार पूरा किया था। उन्हें बलिदान और जीवनदान की राह में सुस्पष्ट और मूलभूत स्थान इसीलिए प्राप्त हुआ कि उन्होंने सभी विश्वासों की आधार शिला अर्थात 'तौहीद'' के कलिमें को इस्लामपूर्व के अनेकेश्वरवादी राजसी अत्याचार के पंजों से छुड़ाया था। चुनानचे इस विचार बिन्दु की ओर एक ब्रह्मज्ञानी का मस्तिष्क पहुंचा तो उसपर आत्म बल द्वारा ज्ञान प्राप्त करने के प्रकाशमय द्वार खुल गये और सहसा कह पड़ा कि वास्तविकता यह कि, **''लाइलाह'' का आधार हुसैन (अ0) हैं''** और जब उसने धर्म के साथ उनकी एकात्मता को अनुभव किया तो इस बात की गवाही दी कि **''हुसैन (अ0) दीन हैं''** और जब उनकी कुर्बानियों की बदौलत यह महसूस कर लिया कि पीड़ित और असहाय दीन की उन्होंने सहायता की और सहारा दिया तो उस ने दूसरे यथार्थ की भी घोषणा कर दी और वह यह कि **''हुसैन (अ0) दीन के शरण दाता हैं''**। इसी चीज़ को वर्तमान युग के एक दृष्टिधनी और तत्व–ज्ञानी दार्शनिक एवं कवि 'इक़बाल' ने जब महसूस किया तो उनके मन में यह बात आयी कि वह 'ख़ुदी' और 'बेख़ुदी' की बुनियाद पर मानव

भद्रता के जिस दर्शन की रचना करना चाहते हैं और विश्वास एवं व्यवहार जिस धूप–छांव वाले रेशमी वस्त्र से मानव एकता और उस के धर्म एवं संघर्ष की नई भूषा तय्यार करना चाहते हैं वह वैचारिक और व्यवहारिक दृष्टिकोण से इस्लाम के इतिहास में हुसैन (अ0) की काया पर ठीक उतरती है, तो इसका अनिवार्य परिणाम उन पंक्तियों के रूप में प्रकट हुआ जो 'रूमूज़े बेख़ुदी' में मौजूद है उनके शुद्य विचार की पहचान ये है कि यहाँ भी उन्होंने तौहीद के शीर्षक की पालिया उन्होंने अपनी मसनवी रुमूज़े बेखुदी इस्लामी पंथ के मौलिक स्तम्भों में 'तौहीद' को पहला स्तम्भ ठहराया है। यह वास्तविकता है कि इस्लाम का प्रत्येक जिहाद अल्लाह की राह में था और 'तौहीद' के लिए ही था लेकिन **कर्बला का मैदान और उसका असाधारण जिहाद तौहीद के विश्वास का अमर और शाश्वत प्रतीक बन गया।** इस्लाम के प्रथम स्तम्भ यअ्नी 'तौहीद' की सुरक्षा में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) ने वह सब कुछ कर डाला जो इस अवसर पर अगर हज़रत पैग़म्बर (स0) मौजूद होते तो आपकी ज़िम्मेदारी होती उस जिहाद और कुर्बानी में वास्तविक भरोसे का कारण सिर्फ़ हुसैनी जिहाद न था अपितु रसूल का उत्तराधिकारी होना भी उसके आयाम ;क्पउमदेपवदेद्ध में सम्मिलित था। इक़बाल इस कुर्बानी के पूरे सिलसिले को समझ गये थे **जिसका औपचारिक प्रारम्भ जनाब इब्राहीम (अ0) के एकेश्वरवाद के उद्घोष और महान बलिदान से हुआ था।** इसीलिए वह कर्बला की घटना के कर्म में न केवल इस्लामी स्वतंत्रता को देख रहे थे बल्कि मूलभूत विचार धाराओं की एक ऐसी माला का अवलोकन कर रहे थे जिसका गठन बहत्तर रक्तरंजित मनकों ने किया था।

"सत्या के लिए धूल और रक्त से शराबोर हुए है अतः 'लाइलाह' का आधार बन गये हैं।"

"इल्लल्लाह का चिन्ह मैदान पर अंकित किया (अर्थात) हमारी मुक्ति के शीर्षक वाली पंक्ति लिखी।"

"हमारे हृदय के तार उन की वाद्य कारिता से अब भी कंपित हैं और उनके अल्लाहोअकबर कहने की आवाज़ से हमारे ईमान अब भी ताज़ा हैं।"

13– हुसैनी क़दम का प्रत्येक स्तर तौहीद द्वारा निर्मित सन्मार्ग पर अमिट चिन्ह उभारता हुआ
आगे बढ़ता रहा। यहां तक कि मन्ज़िल पर पहुँच गया। जब वह करबला के मअ्रिके के लिए स्वदेश छोड़कर निकले तो आचरण की एकता की अभिव्यक्ति हर पग पर हुई। मदीने से निकलना, मक्का त्यागना, फिर किसी संयोग अथवा रास्ता भटकने के कारण नहीं बल्कि समझ–बुझकर कर्बला में उतरना और इस बीच ईमान का अंश बन जाने की क्ष्मता रखने वाले लोगों का स्वागत और छोटी सी पलटन में उन का सम्मिलित किया जाना और उनके उद्देश्यों के परिणामों से परायेपन की प्रकृति रखने वाले लोगों को बहुत अच्छे ढंग से विदा कर देना और साथ रहने या साथ छोड़कर चले जाने की छूट अपने साथियों के लिए अन्तिम समय तक बनाये रहना, जिहाद के लिए तत्पर रहने के बावजूद रक्त पात से बचने का हर सम्भव प्रयास करना, यह और इसी प्रकार की बहुत से बातों का घटित होना संयोग मात्र न था बल्कि एक प्रभावकारी सक्रिय और राह दिखाने वाली आन्तरिक एकता का फल था। इस के विपरीत अगर यज़ीदी क़दम और व्यवस्था एवं उद्देश्यों पर दृष्टिपात किया जाये तो **वह अपने ऐतिहासिक पृष्ट भूमि और उद्देश्य परक मतन का एक अचम्भा दिखेगा। उसके अस्तित्व और पृष्ठभूमि में विघटन, परस्पर विरोध, व्याकुलता, फेर बदल, विद्रोह, बे वफ़ाई क़रार भंग, निर्लज्जता, धर्म की बेधड़क अवमानना, इस्लाम के दो सब से बड़े ईट–पत्थर से बने प्रतीकों अर्थात 'कअ्बा'और 'रसूल (स0) की मस्जिद' का विनाश और ताराजी एवं एक अपने युग की सब से बड़ी हज़रत पैग़म्बर (स0) के हाड़–माँस से**

बनी ज़िन्दा अलामत, (सजीव प्रतीक) अर्थात हुसैन बिन अली (अ0) के आत्मा को तड़पा देने वाले बुद्धि को फूंक देने वाले और अन्तरात्मा को विकृत कर देने वाले क़त्ल के अलावा और क्या दिखई देगा? इससे तौहीद के विश्वास से अपने आप में विमुखता और अनेकेश्वरवाद और उसकी सहायक शक्तियों की ग़ुलामी के सिवा और कौन सा नाम दिया जा सकता है?

14— आप की जीवन दृष्टि के व्यवहारिक प्रसार अथवा परिणाम के रूप में जो जिहाद अस्तित्व में आया उस के सूक्ष्म अंशों की उपेक्षा करते हुए अगर उस छोटी सी सेना पर दृष्टि डाली जाये तो उद्देश्यों के बोध और चिंतन की एकता की ऐसी उत्कृष्ट कृति दिखेगी जिस का कोई दूसरा उदाहरण विश्व—इतिहास में उपलब्ध नहीं हो सकता है। हुसैन (अ0) की इस पल्टन और उनके उद्देश्यों से एकात्मता अपितु शिनाख़्त ;प्कमदजपपिबंजपवदद्ध अपनी मिसाल आप है। यह पल्टन अपनी यौगिक मनोदशा चिन्तन पद्धति ओर क़दम उठाने की स्थितियों के लिहाज़ से दुनिया की सब से प्रखर ऐसी तौहीदी पल्टन थी जिसमें शिर्के ख़फ़ी (सूक्ष्म अनेकेश्वरवाद) के अंश सूक्ष्मदर्शी—अवलोकन के बावजूद न मिल सकेंगे। तौहीद का विश्वास इन बहत्तर व्यक्तियों के लिए भी जीवन और ह्रदय धमनी की हैसीयत रखता था। वह गिनती में कम थे परन्तु एकात्मता की दृष्टि से ''तौहीद—पुत्र'' कहे जाने के पात्र थे। उनका जीवन हुसैन (अ0) का जीवन था, उनका विश्वास हुसैन (अ0) का विश्वास था और उनका जिहाद हुसैन (अ0) का जिहाद था। उनके स्वधर्म का नाम हुसैन (अ0) था, यह धर्म आज भी विद्यमान है। अपनी सर्वांगीणता और सार्वभौमिकता के साथ—साथ इस धर्म में कोई उच्च स्थान पाने के लिए शर्त यही है कि ''हुसैन (अ0) द्वारा प्रतिष्ठित होने वाला'', जीवन और धर्म के विषय में हुसैन (अ0) की ऐसी कल्पनायें रखता हो। अपनी सार्वभौमिकता के कारण यह धर्म उन शर्तों को पूर्णरूपेण पूरा न करने वालों के लिए भी लाभान्वित होने का अवसर उपलब्ध कराता है परन्तु इस के लिए यह शर्त तो बहरहाल हो ही गी कि जिसका ज़ियारतों में बराबर वर्णन होता है—

''मेरी उससे संधि है जो आपसे संधि रखता है, मेरा उससे युद्ध है जो आपसे युद्ध रखता है।''

15— हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के जन्म—शुभ की चौदह सौ वर्षीय यादगार वास्तव में एक ऐसा अवसर है जिसको हमें उन मूल्यों की पुनः प्राप्ति और आधुनिक काल के अनुरूप पुनः सृजन के लिए उपयोग करना है कि इनके लिए हज़रत ने बलिदान किया था। यह सम्मेलन हुसैनीयत के पुर्नभ्यास ;त्मतिर्मीमते ब्वनतेमद्ध की हैसीयत रखते हैं जो अनुभूति में चमक और उत्साह में नवीन शक्ति उत्पन्न करने का कारण हो सकते हैं। हज़रत पैग़म्बर (स0) बराबर यह कहते रहे हैं। कि, **''यह हुसैन हैं इन्हें पहचान लो और इन का बोध प्राप्त करो।''** इस कथन शुभ का दायरा सामान्य परिचय से कहीं व्यापक है। इसमें सचमुच उस चिर—कालिक बोध की ओर संकेत है **जिसके लिए मुस्लिम पंथ को विशेषतया हुसैन (अ0) की पहचान का उत्तरदायी बनाया गया है।**

●●●

रुबाई

बिन्ते ज़हरा नक़वी नदल हिन्दी

दुनिया में सईदे अज़ली बन जाओ
ग़म ख़्वारे हुसैन इब्ने अली बन जाओ
शब्बीर के मक़सद की हिफ़ाज़त करके
अन्सारे हुसैन इब्ने अली बन जाओ

●●●